International Journal of Advanced Academic Studies

E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2020; 2(3): 85-87
Received: 03-05-2020
Accepted: 05-06-2020

रईसा खातुन
शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
रईसा खातुन
शोधार्थी, गृहविज्ञान विभाग, जे.पी. विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

बच्चों के संवेगात्मक विकास में माता पिता की भूमिका एक अध्ययन

रईसा खातुन

सारांश
प्रारंभिक बाल्यावस्था में विकास में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं उनमें से एक यह है कि अपने व दूसरों के संवेगों के बारे में बात करने की क्षमता में वृद्धि होती हैं और संवेगों को समझ पाने की क्षमता में वृद्धि होती है। 2 से 4 साल के बीच बच्चे संवेगों को परिभाषित करने के लिए पहले से कहीं ज्यादा शब्दों का इस्तेमाल करने लगते हैं। वे संवेगों के कारणों और परिणामों के बारे में भी सीखना शुरू कर देते हैं। वे इस बात की भी जागरूकता दिखाने लगते हैं कि उन्हें सामाजिक मापदण्डों के अनुरूप अपने संवेगों/भावनाओं को संभालना पड़ेगा। जब बच्चे 4–5 साल के होते हैं तब वे संवेगों पर विचार करने की अधिक क्षमता दिखाते हैं। वे ये भी समझने लगते हैं कि एक ही घटना अलग–अलग लोगों में अलग–अलग भावना जागृत करती है। वे भावनाओं का नियमन करने की बढ़ती जागरूकता दिखाने लगते हैं ताकि वे सामाजिक मापदण्डों के अनुरूप व्यवहार कर सकें।

भूमिका
बाल्यावस्था के आरभ से ही संवेग विस्तृत रूप में दृष्टि होने लगते हैं। यद्यपि संवेगों का विकास एक निश्चित अनुक्रम में होता है तथा विकास के प्रत्येक चरण में कुछ नये रूप परिलक्षित होते हैं। बाल्यावस्था में सांवेगिक अनुभूतियों का विस्तार होता है। मुख्य रूप में उद्वेग, तीव्र भय एवं ईर्ष्या, अतिरंजित रूप से व्यक्त होते हैं।शैशवावस्था के अपेक्षा इस अवस्था में संवेगों के विविक्तिकरण की परिपूर्णता के साथ–साथ उनकी अभिव्यक्ति भी स्पष्ट होने लगती है। चूँकि इस अवस्था में बच्चे अतिक्रियाशील होते हैं, अतः खेलने, दौड़ने, कूदने तथा उछलने के कारण उत्पन्न थकान से बच्चों में तीव्र संवेगशीलता उत्पन्न होती है। बालक अपने को अतिसक्षम आँकते हैं तथा माता–पिता द्वारा उनकी क्षमता से परे के कार्यों को करने के लिए मना करने पर अपने ऊपर लगाये गए अंकुश का विरोध करते हैं। इसके अतिरिक्त वे जब किसी कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न नहीं कर पाते तो क्रुद्ध हो जाते हैं।
परिवार में जन्मक्रम बालक की संवेगशीलता को प्रभावित करता है। प्रथम जन्मक्रम वाले बालक की अपेक्षा द्वितीयक्रम वाले को माता–पिता द्वारा अधिक प्रोत्साहन मिलता है साथ ही साथ उसको अपनी रक्षा के लिए माता–पिता से हमेशा बल मिलता रहता है। यही कारण है कि दूसरे बालक को अपना क्रोध प्रकट करने और सीधा आक्रमण करने में कम संकोच होता है। बालकों पर संवेगात्मक दबाव उस स्थिति में अधिक होता है कि माता–पिता द्वारा एक समय में दोनों बालकों पर समान ध्यान न दिया जा सकेद्य एक अन्य अध्ययन में जेरसिल्ड ने यह निष्कर्ष निकाला है कि लिंग या जन्मक्रम चाहे जो भी हों, जिस बालक से उसके माता–पिता अपनी प्रत्याशाओं की पूर्ति की उम्मीद रखते हैं, उन बालकों में संवेगात्मक तनाव का अनुभव, अधिक होता है।
इस अवस्था में बालक का सामाजिक परिवेश विस्तृत हो जाता है। अब वह पास पड़ोस के बच्चों के साथ खेलना आरंभ कर देता है। अतः बच्चे में समायोजन की समस्या उत्पन्न होने की प्रबल संभावना होती जिससे वह तनाव का अनुभव करता है। बालक जितना छोटा और अनुभवहीन होगा, तनाव के उत्पन्न होने की संभावना उतनी ही अधिक होगी। संवेगों का विकास यद्यपि अनुक्रम में चलता है तथापि इसके संरूप में भिन्नता विभिन्न अंतरालों तथा वैयक्तिक भिन्नताओं के कारण पाई जाती है। वे बालक जिसका पालन पोषण शैशवावस्था में शांत परिवेश में हुआ हो तथा जिनकी आवश्यकताएँ तुरंत पूरी कर दी जाती रही हों, वे बच्चे समृद्ध परिवेश में पले–बढे बालकों की अपेक्षा कम संवेगात्मक अनुभूतियां प्रदर्शित करते हैं। वे बालक जिनको माता से अति वात्सल्य मिला होता है, वे अपनी माता द्वारा नवजात सहोदर की देख–रेख करते देखकर क्रोध और ईर्ष्या की तीव्र संवेगात्मक अनुभूतियाँ प्रकट करते हैं। इसे बाल वैमनस्यता कहा जाता है। जिसे निम्न भागों में विभक्त किया है–

सामान्य संवेग– पूर्व बाल्यावस्था में क्रोध, भय, ईर्ष्या, स्नेह, जिज्ञासा और हर्ष जैसी संवेगात्मक दशाओं का अनुभव बच्चे को होता है। इनमें से प्रत्येक संवेग की अभिव्यक्ति यद्यपि शैशवावस्था में हो जाती है तथापि इस अवस्था में कुछ नए संवेग विकसित हो जाते हैं और प्रत्येक संवेग को उकसाने वाले ऐसे उद्दीपन भी उत्पन्न हो जाते हैं जिनका अनुभव अधिकांशतः छोटे बालकों को सामान्य रूप से होता है।
क्रोध– प्रारंभिक बाल्यावस्था में क्रोध संवेग का सामान्य रूप होता है। एक ओर छोटे बालकों के जीवन में क्रोध को उद्दीप्त करने वाली परिस्थितियाँ बहुत होती हैं और अंशतः इस कारण कि छोटे बालक जल्दी ही मालूम हो जाता है कि क्रोध चाही हुई चीज को तुरंत पाने, किसी का ध्यान आकृष्ट करने या किसी इच्छा की पूर्ति करने का एक आसान तरीका है। जेरसिल्ड ने उन परिस्थितियों का जिक्र किया है, जो छोटे बालकों को सबसे अधिक क्रोधित करती हैं।ये दशाएं हैं खिलौनों को लेकर लड़ाई, कपड़े पहनने में बारे में झगड़ा , इच्छानुसार कार्यों को करने में बाधा उत्पन्न होना, इच्छाओं की पूर्ति में बाधा, दूसरे बालक का जोरदार हमला, किसी मनपसंद चीज का दूसरे बालकों द्वारा ले

लिया जाना, दूसरे बालक से मार–पीट या गाली गलौज करना। छोटे बालक के क्रोध की आवृत्ति और तीव्रता में सामाजिक पर्यावरण की भूमिका महत्वपूर्ण होती हैं।उदाहरण के लिए, जिन घरों में अतिथि अधिक आते हैं और जहाँ दो से अधिक प्रौढ़ होते हैं वहाँ छोटे बालकों का मचलना अधिक पाया गया है। गुडएनफ ने अपने अध्ययन में बताया कि जिस बालक के सहोदर होते हैं, उसमें क्रोध का स्तर एकलौते बालक की अपेक्षा उच्च होता है। इसके अलावा, माता–पिता जिस प्रकार का अनुशासन चाहते हैं और जिस प्रकार की पालन–पोषण विधियों का प्रयोग करते हैं उसका भी प्रभाव के क्रोध की आवृत्ति और तीव्रता पर पड़ता है। उदाहण के लिए, जब माता–पिता बालक की नैसर्गिक अनुक्रियाओं (जैसे खाने का तौर तरीका) को समाज में स्वीकृत तरीकों से ढालना चाहते हैं, तो बालक के अंदर क्रोध की अनुक्रिया हो सकती है। इसी प्रकार की संवेगात्मक प्रतिक्रयाओं के निरंतर उत्पन्न होते रहने से स्थायी भावात्मक अनुक्रियाएँ पैदा हो सकती हैं।
जब छोटा बालक क्रोधित होता है तब अपने क्रोध की अभिव्यक्ति तीव्र संवेगों या मचलने से प्रकट करता है। मचलने में बालक रोता है, चिल्लाता है, पैर पटकता है, लात मारता है, ऊपर–नीचे उछलता है, हाथ चलाता है, फर्श पर लेटता है, साँस रोक लेता है, शरीर को कड़ा कर लेता है या उसे बिलकुल ढीला छोड़ देता है। चार वर्ष की आयु तक क्रोध की अनुक्रिया किसी निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर उन्मुख होने लगती है। तब क्रोध उत्पन्न करने वाली भावनाओं या शरीर को चोट पहुंचा कर (सिर पटकना) बदला लेने की कोशिश अधिक होती है। तीन और चार वर्ष के बीच मचलना तीव्रता की पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था के अंतिम दिनों में मचलने की अवधि घट जाती है और रूठना, सोच में डूबना और ठिनकना उसकी जगह ले लेता है। मचलना ज्यादतर एक से तीन मिनट तक होता है। एच० एस0 ब्रेट्स ने स्पष्ट किया कि कुछ बाल्कों का प्रारंभिक बाल्यावस्था के अंत तक अपने क्रोध पर नियंत्रण हो जाता है, लेकिन अधिकांश का नहीं होताद्य फलतः वे अपना क्रोध विभिन्न स्तर की तीव्रता वाले उद्रेकों से प्रकट करते हैं।हरमन ने अध्ययन द्वारा पुष्ट किया कि तीन वर्ष की आयु तक संख्या और तीव्रता की दृष्टि से लड़के और लड़कियाँ के मचलने में कोई स्पष्ट अंतर नहीं होता। इस आयु के बाद लड़कियों की अपेक्षा लड़कों के मचलने में अधिक आवृति और तीव्रता होती है।

भय– छोटा बालक, बड़े बालकों की अपेक्षा अधिक चीजों से डरता है। विकसित बुद्धि के कारण उसके लिए उन परिस्तिथियों में छिपे खतरों को पहचानना संभव हो जाता है जिन्हें पहले वह खतरनाक नहीं समझता थाद्य उदाहरण के लिए, साँपों का भय वर्ष की आयु से पहले अधिक नहीं दिखाई देता, लेकिन 4 वर्ष की आयु तक यह भय निश्चित रूप से स्पष्ट होने लगता है। इनलव ने अपने अध्ययनों के आधार पर स्पष्ट किया कि शारीरिक खतरे वाली परिस्तिथि जैसे एक तंग पटरे के ऊपर चलने में, छोटे बालक शुरू में परिस्तिथि की नवीनता से डरते हैं, लेकिन जैसे–जैसे नवीनता समाप्त होती जाती है वैसे–वैसे डर भी घटता जाता है। शुरू में भय व्यापक होता है, विशिष्ट नहींद्य वह भय के बजाय आंतक की अवस्था से अधिक मिलता–जुलता है। ज्यों–ज्यों बालक बड़े होते जाते हैं त्यों–त्यों भय की अनुक्रियाएँ अधिकाधिक विशिष्ट होती जाती हैंद्य
छोटे बालकों की भय की अनुक्रियाओं में शामिल होती हैं– भागना और छिप जाना, डरावनी परिस्तिथियों से बचना, तथा यह कहना कि "इसे हटाओ" "मै नहीं पकड़ना चाहता" या "मैं यह नहीं कर सकता" इत्यादिद्य केसलर ने पाया कि इन अनुक्रियाओं के साथ प्रायः रोना और ठिनकना भी सम्मिलित होता है। छोटे बालकों के भय के विकास में अनुबधन या अनुकरण द्वारा सिखने तथा अप्रिय स्मृतियों का बड़ा होता है। कुछ विशिष्ट घटनाओं के भय के कारण उनसे मिलती–जुलती या सहचरी घटनाओं से भी भय उत्पन्न हो सकता है, जैसे तीव्र ध्वनि या शोर होने से बच्चा उस वस्तु (जहाज इत्यादि) से भयभीत हो जाता है। डरावनी घटनाओं वाली कहनियों और तस्वीरें, रेडियो और टेलीविजन के प्रोग्राम या सिनेमा इत्यादि छोटे बालकों के भय के स्रोत हो सकते हैं, विशेष रूप से तब जब उनकी बातों का बाल जीवन के अनुभवों से साम्य रहता है। कितने ही भय किसी भयभीत व्यक्ति के अनुकरण से पैदा हो जाते हैं।स्कूल पूर्व बालकों का उन चीजों से डरना जिनसे उनकी माताएं डरती हैं बहुत सामान्य बात है। अतं में, बहुत से भय किसी अप्रिय अनुभव के अनुप्रभाव के रूप में पैदा होते हैं। ज्यों–ज्यों बालक बड़ा होता जाता है, त्यों–त्यों भय की संख्या और तीव्रता घटती जाती है।
भय की तीव्रता में कमी के अनेक कारण होते हैं जैसे–बच्चा यह समझ जाता है कि जिस चीज से वह पहले डरता था उसमें डर की कोई बात नहीं है। इसके अतिरिक्त सामाजिक दबावों का फल होता है जिनसे वह उपहास का पात्र बनने से बचने के लिए अपने भय को छिपाना सीख जाता है, अंशतः सामाजिक अनुकरण का फल है, और अंशतः बड़ों के निर्देशन का, जिससे वह पहले जिन चीजों से डरता था उनको पसंद करने लगता है या उनके प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति अपना लेता है। जेरसिल्ड ने स्पष्ट किया कि बालक का परिचित लोगों, पर्यावरण और अनुभवों से जब भलीभांति परिचय हो जाता है तब उनके प्रति उसका भय मिट जाता है।

ईर्ष्या– किसी व्यक्ति के प्रति क्रोधपूर्ण अमर्ष की भावना है। यह सदैव सामाजिक परिस्तिथियों में पैदा होती है, विशेष रुप से ऐसी परिस्तिथियों में जिनमें बालक के प्रिय या चाहे हुए लोग शामिल होते हैं।छोटे बालकों में ईर्ष्या का उद्रेक तब होता है जब माता–पिता या वे लोग जो बालक की देख–रेख करते हैं प्रकटतः अपनी रूचि या ध्यान किसी दूसरे की ओर, विशेष रूप से नवजात शिशु की ओर कर देते हैं। ईर्ष्या का आरभ प्रायः दो से पांच वर्ष के बीच की आयु में छोटे सहोदर का जन्म होने पर बहुत होता है।
छोटा बालक अपने से बड़े ऐसे सहोदर के प्रति ईर्ष्यालु हो सकता है जिसे उससे अधिक संसाधन या सुविधाएँ प्राप्त होंद्य ऐसी परिस्तिथि को वह प्रायः माता–पिता का पक्षपात समझता है। वह ऐसे सहोदर के प्रति भी ईर्ष्यालु हो सकता है जिसे खराब स्वास्थ्य के कारण देख–रेख की अधिक जरुरत होती है। इस बात की संभावना बहुत कम होती है कि, बालक अपने सहोदरों की तरह ही घर के बाहर के बच्चों से भी ईर्ष्या करें क्योंकि बाहरी बच्चों से उसका सम्पर्क बहुत सिमित होता है और प्रायः ऐसे समय होता है जब माँ या अन्य लोग जिन्हें बालक प्यार करता है उपस्थित नहीं होतेद्य लेकिन छोटे बालक प्रायः अपने पिता से भी ईर्ष्या रखते हैं। उनका माँ के प्रति ममत्व हो जाता है क्योंकि वह सदैव उनके साथ रहती है, और इसलिए माँ का पिता को प्यार करना उन्हें बुरा लगता है। जेरसिल्ड तथा वोल्मर का मानना है कि ऐसी ईर्ष्या दो और तीन वर्ष के बीच पराकाष्ठा को प्राप्त होती है और तब ज्यों–ज्यों बालक की रुचियों का दायरा बढ़ता है त्यों–त्यों वह घटती जाती है।
प्रारंभिक बाल्यावस्था में ईर्ष्या की अभिव्यक्ति बहुत कुछ उसी तरह होती है जिस तरह क्रोध कीद्य अंतर केवल यह होता है कि लक्ष्य प्रायः दूसरा व्यक्ति होता है–वह व्यक्ति जिसे बालक समझता है कि उसने प्यार करने वाले व्यक्ति से उनका हक छीन लिया है। कभी–कभी ईर्ष्या के कारण बालक इस तरह के शैवशवोचित व्यवहार करने लगता है जैसे, अंगूठा चुसना, बिस्तर में पेशाब कर देना, बहुत शैतानी करने लगना, या खाने से इंकार करके अथवा बीमारी यह भयभीत होने का बहाना करके दूसरों का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करना। लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में ईर्ष्या अधिक होती है। पहला बच्चा अपने बाद में पैदा होने वाले सहोदरों की अपेक्षा ईर्ष्या अधिक बार और अधिक तीव्रता के साथ प्रकट करता है। बड़े परिवारों की अपेक्षा छोटे परिवारों में ईर्ष्या अधिक सामान्य होती है। जो माताएं बच्चों के लिए आवश्यकता से अधिक आकुल रहती हैं या जिनका अनुशासन एक सा नहीं होता उनके बच्चों में ईर्ष्या अधिक समस्याजनक होती है तब जो माताएं बच्चों पर कम ध्यान देती हैं उनके बच्चों में कम ईर्ष्या होती है। बोसार्ड एंव जेरसिल्ड ने स्पष्ट किया कि जिन बालकों की आयु का अंतर 18 और 42 महीनों के बीच का होता है उनमें ईर्ष्या इससे कम या अधिक अंतर वाले बालकों की अपेक्षा अधिक होती है।

जिज्ञासा– छोटे बालक में हर चीज मांगने की उत्कंठा होती है। घर में, भंडार में, या दूसरों के घर में कोई भी चीज जिसे उन्होंने पहले नहीं देखा हो उनके ध्यान से नहीं बच पातीद्य वे दूसरों के कपड़ों तक को छुकर देखते हैं।अपने, दूसरे बालकों के, और बड़ों के शरीर के बारे में उन्हें बड़ी जिज्ञासा होती हैं।वे कैसे काम करते हैं? चूँकि पहले इंद्रियों और पेशीयों के द्वारा बालक जितनी अधिक क्रियाओं की छानबीन करता था उसमें से कुछ के

ऊपर चेतावनी और दंड के रूप में सामाजिक दबाव पड़ने क कारण रोक लग जाती है, इसलिए शब्दों से सार्थक वाक्य बनाने की योग्यता आगे ही बालक ऐसे सवाल पूछने लगता है जिनका कोई अंत नहीं होता, जैसे, "यह कैसे काम करता है?" "यह कहाँ से आया", "यह यहाँ कैसे आया" इत्यादि। प्रश्न पूछने की आयु दुसरे और तीसरे वर्ष के बीच शुरू होती है और छठे वर्ष में अपनी पराकाष्ठा पर होती है। जब बालक को सवालों का जबाब मिल जाता है तब उसकी जिज्ञासा शांत हो जाती है क्योकि उसे ऐसी जानकारी मिल जाती है जो उसकी अपनी छानबीन से संभव नहीं थी। लेकिन जब से संतोषजनक उत्तर नहीं मिल मिलता है यह बिलकुल ही नहीं मिलता तब उसकी जिज्ञासा घट जाती है और फल यह होता है कि अपनी आयु और बुद्धि स्तर के अन्य बालकों की तुलना में उसकी जानकारी सिमित रह जाती।

हर्ष– मुस्कुराने और हंसने की मात्रा में तथा इन अनुक्रियाओं को पैदा करने वाले उद्दीपन में आयु के अनुसार निश्चित अन्तर होते हैं। छोटे बालक अधिक प्रकार के उद्दीपनों के प्रति अनुक्रिया करता है, और ऐसी परिस्तिथियों का उस पर अधिक प्रभाव पड़ता है जिनमें दूसरे बालक मौजूद रहते हैं। बालक नई खोजों से प्रसन्न होता हो विशेष रूप से तब जब उनके अन्वेषण के रास्ते में रुकावटें डाल दी जाती हैं या जब उसकी सफलताएँ दुसरे बालकों की अपेक्षा ज्यादा होती हैं। दूसरों को चिढ़ाना, बच्चों या बड़ों से छेड़छाड़ करना तथा जानवरों या दूसरे बालकों को परेशानी में डाल देना उसके अंदर श्रेष्ठता की भावना पैदा करता है जिससे उसे प्रसन्नता होती है। वह बेतुकी बातों को अच्छे ढंग के मजाकों को परिहास के अन्य तरीकों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह समझ सकता है और वास्तविक जीवन की परिस्तिथियों में हास्य प्रसंगों, सिनेमा या टेलीविजन में खूब रूचि लेता है। हर्ष की अनुक्रिया में मुस्कुराना, हँसना या प्रायः खूब ऊँचे स्वर से खिलखिलाना, ताली बजाना, उछलना, कूदना या हर्षजनक वस्तु या व्यक्ति से लिपटना शामिल होता है, जिस ढंग से बालक हर्ष प्रकट करता है वह न केवल हर्ष की तीव्रता पर बल्कि उसे मर्यादा के अंदर रखने के लिए उस पर जो सामाजिक दबाव पड़ते है, उन पर भी निर्मर होता है।

स्नेह– बालक सुख एंव संतोष देने वालों से स्नेह करना सीखता है। छोटा बालक न केवल मनुष्यों से बल्कि जानवरों और बेजान चीजों से भी स्नेह प्रकट करता है। बालक प्रायः अपने पसंद के खिलौने से उसी प्रकार प्रेम प्रकट करता है जिस तरह अपने घर के लोगों से। छोटा बालक स्नेहपूर्ण व्यवहार, हार्दिक सम्मान, मित्रता, सहानुभूति या निस्सहायता प्रकट करता है। स्नेह की अभिव्यक्ति वाणी की अपेक्षा शरीर की गतिविधियों से अधिक होती है। एमेन और रेनसन ने स्पष्ट किया की लड़कियाँ, लड़कों की अपेक्षा अधिक स्नेहशील होती हैं और दोनों ही विपरीत लोगों के व्यक्तियों से अधिक अपने ही लिंग के बच्चों और बड़ों के प्रति स्नेह की अनुक्रिया करते हैं। हिथरस का कहना है की चौंथे वर्ष के आस–पास बालक की संवेगात्म्क निर्भरता परिवार से हट कर दूसरे बालकों पर हो जाती है। अलेक्जेंडर ने स्पष्ट किया कि जिस बालक को दूसरों का, घर वालों का या घर के बाहर वालों का स्नेह नहीं मिलता उसके "आत्म–केन्द्रित' हो जाने की संभावना अधिक हो जाती है जिससे उसके लिए दूसरों के साथ संवेगों के आदान–प्रदान करने में रुकावट हो जाती है।

छोटे बालक संवेगों के अन्य प्रकारों की भांति स्नेह को भी अमर्यादित ढंग से प्रकट करते हैं।वे प्रिय व्यक्ति या वस्तु से चिपटते है, उसे चुमते हैं और सहलाते हैं। वे हमेशा प्रिय व्यक्ति के साथ रहना चाहते हैं ताकि उनका प्रिय व्यक्ति जो कुछ करता है वही वे भी करें, भले ही इससे उसके काम में मदद मिलने के बजाय रुकावट पैदा हो। प्रिय व्यक्ति के साथ, बालक प्रिय जानवर या खिलौने को बराबर अपने साथ रखना चाहता है, यहाँ तक कि सोते समय भी उसे नहीं छोड़ता। स्नेह की अभिव्यक्ति का स्तर एवं आवृत्ति अन्य कारकों से प्रभावित होती है।

निष्कर्ष

बालक ना केवल अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हैं बल्कि दूसरे व्यक्तियों के हाव–भाव को भी पढ़ सकते हैं। इसमें चेहरे के भावों को पढ़ना शामिल है जो उन्हें यह जानने में मदद करते हैं कि किसी विशेष स्थिति में कैसे व्यवहार करना है। सामाजिक संदर्भ को जानने की क्षमता का विकास नवजात् शिशु को समस्याओं के बारे में बेहतर तरीके से पता करने में मदद करता है। जब भी वे किसी अंजान व्यक्ति का सामना करते है तो यह कुशलता उन्हें यह जानने में मदद करती हैं कि क्या उससे डरना जरूरी है नवजात शिशु अपने जीवन के दूसरे साल में सामाजिक संदर्भ को भापने में बेहतर बन जाता है। इस आयु में बच्चे व्यवहार करने से पहले अपनी माता को देखकर स्थिति की जांच करते हैं। वे पता लगाते हैं कि वो हंस रही है, रो रही है, या फिर गुस्से में है। एक अध्ययन में पाया गया कि 6 से 9 महीने के शिशुओं की तुलना में 14 से 22 महीने के शिशु अपने सामाजिक संदर्भ की जानकारी प्राप्त करने के लिए अपनी मां के चेहरे को ज्यादा देखते हैं। संवेगों का नियमन और उन से उबर पाना–जीवन के पहले साल में नवजात शिशु में अपने संवेगों की प्रतिक्रिया की गहनता और अवधि को कम करने या रोक पाने की क्षमता का विकास होता है। प्रारंभिक नवजात शिशु की अवस्था में बच्चे अपना अंगूठा मुंह में डालकर अपने आपको संतुष्ट करते है। परंतु सबसे पहले वे अपने संवेगों को संतुष्ट करने के लिए अपने पालनकर्त्ता पर निर्भर करते हैं, जैसे उनके द्वारा लोरी सुनाना, गोदी में लेना, सहलाना आदि। कई विकासवादी लोग मानते है कि इससे पहले कि बच्चा बहुत ही गुस्से और बेकाबू अवस्था में पहुँचे पालनकर्त्ता द्वारा उसे संतुष्ट करना एक अच्छी रणनीति है। शैशव के बाद के हिस्से में जब शिशु किसी बात से उत्तेजित हो जाते हैं तो कभी–कभी अपनी उत्तेजना पर काबू पाने या उसे कम करने के लिए अपना ध्यान कहीं और लगाने का प्रयास करते पाए गए हैं। 2 साल की उम्र के घुटने चल रहे शिशु भाषा के उपयोग से भी अपने संवेगों की स्थिति और परेशानी पैदा करने वाले संदर्भ का आभास देने में सक्षम हो जाते हैं। जैसे कोई बच्चा कह सकता है ''भौं, भौं मारा'' इस तरह की अभिव्यक्ति भी माता–पिता को बच्चे के संवेग को संभालने में सहायता करती है।

संदर्भ सूची

1. मानव विकास का मनोविज्ञान, जेवियर समाज सेवा संस्थान
2. नन्दा, पी0 एण्ड पान्नू, जी0 : इमोशनल स्टेबिलिटी एण्ड सोसियो–पर्सनल फैक्टर्स; इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एण्ड एजूकेशन, 2005।
3. नाघवी, फतनेह एवं रेडजौन, मारूफ. द रिलेशनशिप बिटविन जेण्डर एण्ड इमोशनल इंटेलिजेन्स. वर्ल्ड एप्लाइड साइंसेन्स जर्नल, 2011
4. नेहरा, सुमन. रिलेशनशिप बिटविन ऐडजस्टमेन्ट एण्ड इमोशनल मैचुरिटी ऑफ प क्लास स्टूडेन्ट्स, एजुकेशनिया कनफैब, 2014
5. पाण्डेय, रवि प्रकाश. बालक का संवेगात्मक विकास, पी–एच.डी. शोध प्रबन्ध, जौनपुर वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, 1996
6. पाठक, स्वेता. पैरेन्टल मॉनिटरिंग एण्ड सेल्फ–डिस्कोजर ऑफ एडोल्वसेन्ट्स. आई.ओ.एस.आर. जर्नल ऑफ ह्युमिनिटिज एण्ड सोशल साइंस, 2012